# शोध दिशा

ISSN 0975-735X

विश्वस्तरीय शोध-पत्रिका

**UGC APPROVED CARE LISTED JOURNAL**

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त शोध पत्रिका

शोध अंक 53 | जनवरी-मार्च 2021 | 300.00 रुपए



**संपादकीय कार्यालय**

हिंदी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार,
बिजनौर 246701 (उ०प्र०)
फोन : 01342-263232, 07838090732
ई-मेल : shodhdisha@gmail.com
वैब साइट : www.hindisahityaniketan.com

**क्षेत्रीय कार्यालय**

हरियाणा
**डॉ० मीना अग्रवाल**
ए-402, पार्क व्यू सिटी-2 सोहना रोड,
गुड़गाँव (हरियाणा)
फोन : 0124-4076565, 07838090237

दिल्ली एन०सी०आर०
**डॉ० अनुभूति**
सी-106, शिवकला अपार्टमेंट्स
बी 9/11, सेक्टर 62, नोएडा
फोन : 09958070700

(सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।)



**संपादक**
डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

**प्रबंध संपादक**
डॉ० मीना अग्रवाल

**संयुक्त संपादक**
डॉ० शंकर क्षेम

**उपसंपादक**
डॉ० अशोककुमार 09557746346
डॉ० कनुप्रिया प्रचण्डिया

**कला संपादक**
गीतिका गोयल/ डॉ० अनुभूति

**विधि परामर्शदाता**
अनिलकुमार जैन, एडवोकेट

**आर्थिक परामर्शदाता**
ज्योतिकुमार अग्रवाल, सी०ए०



**शुल्क**

आजीवन (दस वर्ष): व्यक्तिगत : पाँच हजार रुपए
संस्थागत : छह हजार रुपए
वार्षिक शुल्क : आठ सौ रुपए
यह प्रति : तीन सौ रुपए



प्रकाशित सामग्री से संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका से संबंधित सभी विवाद केवल बिजनौर स्थित न्यायालय के अधीन होंगे। शुल्क की राशि 'शोध दिशा' बिजनौर के नाम भेजें। (सन् 1989 से प्रकाशन-क्षेत्र में सक्रिय)



स्वत्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल द्वारा श्री लक्ष्मी ऑफसैट प्रिंटर्स, बिजनौर 246701 से मुद्रित एवं 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ०प्र०) से प्रकाशित। पंजीयन संख्या : UP HIN 2008/25034

संपादक : डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

धूमिल के काव्य में मानवमूल्य/ **अस्तीराम** 145
टोकरेकोली जनजाति की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन/ **भिकन गोकुळ शिरसाठ, डॉ॰ धनंजय रमाकांत चौधरी** 150
वैश्वीकरण के दौर में किसानों की स्थिति (आधुनिक हिंदी उपन्यासों के संदर्भ में)/ **निशा रानी** 155
आधुनिक शिक्षा में योग शिक्षा की प्रासंगिकता : एक समाजशास्त्रीय समीक्षा/ **डॉ॰ मानस उपाध्याय एवं डॉ॰ भूपेंद्रबहादुर सिंह** 160
बच्चन : अनुभूति से अभिव्यक्ति तक/ **नूतन सतपथी** 167
डॉ॰ श्रवणकुमार गोस्वामीजी के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ/ **डॉ॰ जयलक्ष्मी एफ॰ पाटील** 172
कबीर की साखियों में विद्यार्थियों के गुण व कर्त्तव्य/ **डॉ॰ विमलेश** 179
अहिल्या के मिथक को तोड़ता 'शिलावहा'/ **राहुल प्रसाद** 183
भक्तिकालीन संतसाहित्य : एक दृष्टिक्षेप/ **डॉ॰ आबासाहेब राठोड** 188
हरिशंकर परसाई का व्यंग्य-सौष्ठव/ **डॉ॰ आशा पांडेय** 193
नागार्जुन के काव्य मे प्रतीक-विधान/ **अनुराधा कुमारी** 200
जायसी के काव्य में दार्शनिकता/ **दीपिका शर्मा** 204
मंजुल भगत के कथासाहित्य में स्त्री : एक अध्ययन/ **प्रवीन कुमारी** 209
'समय का सूरज' का वैशिष्ट्य एवं उपलब्धियाँ/ **मोहिनी कश्यप** 212
मीरा और गुरु रैदास की भक्ति-भावना का स्वरूप/ **डॉ॰ निर्मल चक्रधर** 216
मंगेश पाडगाँवकर के 'सलाम' की अनुवादानुकूलता/ **डॉ॰ प्रवीण केंद्रे** 223
समय के समझ से उभरी इक्कीसवीं सदी की कविता/ **दत्ता कोल्हारे** 228
डॉ॰ प्रेमचंद्र गोस्वामी और सामाजिक चेतना : एक विवेचन/ **साक्षी रोलानियाँ, डॉ॰ अनिल अग्रवाल** 231
गुरु जांभोजी और संत कबीर का समाज-दर्शन : एक तुलनात्मक अध्ययन/ **डॉ॰ जितेंद्र कुमार सिंह** 234
महिला रचनाकारों के संस्मरण : एक विवेचन/ **पूनम शर्मा, डॉ॰ अरुण बाला** 242
नासिरा शर्मा की कहानियों में नारी-चेतना/ **मंजु बाई** 246
गुरु जांभोजी के साहित्य में पर्यावरण-संरक्षण एवं यज्ञ/ **महेंद्र कुमार जाट** 249
बेनामी संत शीतलदास के काव्य में अभिव्यक्त जीवनमूल्य/ **रजनीशकुमार कौशिक** 253
महिला आत्मकथाओं में वर्णित यौन-शोषण की समस्या/ **रामकिशोर यादव** 258
गुलरा के बाबा में ग्राम्य-जीवन/ **डॉ॰ श्रुति शर्मा** 262
राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज : दलितोत्थान की बेबाक पहल/ **डॉ॰ भाऊसाहेब नवनाथ नवले** 266
प्रेमचंद के उपन्यास 'सेवासदन' के पात्रों पर सामाजिक परिवेश का मनोवैज्ञानिक प्रभाव/ **डॉ॰ ओमकुमार कर्ण** 272

# भक्तिकालीन संतसाहित्य : एक दृष्टिक्षेप

**प्रोफेसर डॉ॰ आबासाहेब राठोड**
हिंदी विभाग प्रमुख एवं शोधनिर्देशक
सौ॰के॰एस॰के॰ महाविद्यालय, बीड
ता॰जि॰ बीड

हिंदी साहित्य के विद्वानों ने भक्तिकाल के कवियों को दो कोटियों में वर्गीकृत किया। एक संतकवि और दूसरी भक्तकवि। संतकवियों के अंतर्गत उन्होंने निर्गुणाश्रयी शाखा के कवियों को रखा और भक्तकवियों में सगुणाश्रयी शाखा के कवियों को स्थान दिया। संत शब्द का शाब्दिक अर्थ है–सत्य का शोधक, सत्य का आधारक, सतजन, सज्जन आदि। भक्त का अर्थ है–स्वयं को सबमें बाँट देनेवाला। भक्त का शाब्दिक अर्थ है–ईश्वरभक्त। जो संत है, वह सही अर्थों में सज्जन होता है। बिना सज्जन हुए क्या भक्त हुआ जा सकता है। शबरी चाहे कबीर या तुलसी की श्रेणी में न आती हो, लेकिन राम स्वयं शबरी से कहते हैं, 'कह रघुपति सुनु भामिनी बाता, मानहुँ एक भगति कर नाता।' यदि ईश्वर के प्रति इन कवियों ने भक्ति का नाता प्रगाढ़ किया है, तो भक्तिकाल के सारे कवि संत हैं और भक्त हैं। संत कबीर, रैदास, नानक, नामदेव, तुलसी, सूरदास, मीरा, दादू, मलूकदास सबमें भक्ति है। भारतीय लोक भी यह विभाजन स्वीकार नहीं करता। वहाँ संत कबीर हैं तो संत तुलसीदास भी हैं। संत रैदास हैं तो संत सूरदास भी हैं। संत दादू हैं तो संत मीराबाई भी हैं। ये सभी संत लोक की उपज हैं। अनुभव का प्रमाण हैं। भक्तिकाल के सारे कवि जितने संत हैं, उससे अधिक भक्त हैं और जितने भक्त हैं उससे अधिक संत हैं। ये संत और भक्त दोनों हैं।

संत-भक्त साहित्य का पुनः विमर्श करते समय सबसे महत्त्वपूर्ण बात सामने आती है–अनुभव की अभिव्यक्ति। अनुभव की ऐसी प्रामाणिक उक्ति हिंदी साहित्य के किसी काल में पूर्वापर नहीं मिलती। भक्तिकाल आत्मा के सत संकल्प की अनुभव वाणी है। कबीर आँखिन देखी पर विश्वास करते हैं। सूरदास अविगत की गति की पकड़ तो करते हैं, लेकिन उसकी अनुभव सघनता को गूँगे जैसे मीठे फल को अंतरगत ही भावे कहते हैं। संतों-भक्तों का यह अनुभव आत्मसत्ता से विस्तारित होता हुआ, जगत सत्ता की परिधि तक पहुँचता है। इसीलिए नामदेव गाते हैं–नामदेव सिमुरन करि जाना, जगजीवन सिउ जिउ समाना। कबीर तो यहाँ तक कह देते हैं कि ईश्वर से मिलने पर वह कुशलता पूछेंगे तो आदि अंत की कहूँगा, उर अंतर की बात। इन संतों के पास और कोई नहीं, हृदय और ईश्वर दो ही साक्षी हैं। इन्होंने अनुभव को गाया और अनुभव का संबल पाया। इसलिए इनकी कविता सत्य को उजागर करती है। वह हृदय की बात है, इसलिए सैकड़ों वर्षों से लोकहृदय को रसाप्लावित करती है। वह सच लगती है। जन-जन का सच। आत्मा-परमात्मा का सच। इस अनुभव की कविता और अनुभव की प्रामाणिकता की हमारे आज के साहित्य में बहुत जरूरत है।

 ISSN 0975-735X

संतों की वाणी 'अनभै' की कविता है। अनभै का दूसरा अर्थ भी है–अन-भय। भयमुक्त वाणी। भय से मुक्त तब ही हुआ जा सकता है, जब हम अपने आत्मस्वरूप को जान लें, साथ ही ब्रह्म, जीव, जगत, माया, मोक्ष आदि की वास्तविकता से स्पष्ट हो जाएँ। इन संतों ने एक ओर अनुभव का कथन किया तो दूसरी ओर अनभय के बल से जन-जन को भयमुक्त कर दिया। संत कबीर ने चरम अनभय पर पहुँचकर आनंदित होकर कहा–'जिहि मरने से जग डरै, सो मेरे आनंद। कब मरिहौ कब पाइहौं, पूरण परमानंद' और फिर वे मरण के पार शाश्वत आत्मरूप होकर गा उठते हैं–'हम न मरिहैं, मरिहैं संसारा।' यह अद्‌भुत बात बड़े 'अनभै' से मिली है। सांसारिक को संसार का, माया का, नरक का, नश्वरता का बड़ा भय बताया जाता है। संतों ने इन सबकी वास्तविकता को अपने अनभै से उजागर किया और संसार में रहते हुए ईश्वर-प्राप्ति का विश्वास पैदा किया।

संतों ने भय से मुक्ति दोनों स्तरों पर अनुभव की–लौकिक स्तर पर भी और पारलौकिक स्तर पर भी। इस संसार के स्वप्न की तरह या रेत के ढेर की तरह जानते हुए भी उसे त्यागने, उससे भागने की सलाह नहीं दी। भक्तिकालीन सारे संत गृहस्थ थे, त्यागपूर्वक भोग की स्थिति से संसार में रहकर संसार को डराते रहे। कमल की तरह कीचड़ में रहकर जल से ऊपर बने रहे। संसार पाप-पुण्य, धरम-अधरम, कर्मकांड-अनुष्ठान का भय दिखाता है। ये संत जप, माला, तिलक, व्रत, उपवास, रोजा, नमाज सबसे उपराम हो गए और राह बताई कि असल कर्म क्या है और जीवन का लक्ष्य ईश्वर-मिलन है और लक्ष्य मन की निर्मलता से ही प्राप्त होता है। 'कबीर मन निरमल भया, जैसे गंगा नीर। पाछै-पाछै हरि फिरै, कहत कबीर-कबीर।' या फिर स्वयं ईश्वर से कहलवा दिया–'निरमल मन जन सो मोहि पावा, मोहि कपट छल-छिद्र न भावा' विरह में पागल गोपियों के मन की निर्मलता एकनिष्ठता और प्रेमाभक्ति के सामने उद्धव के ज्ञान का घमंड चकनाचूर हो जाता है। मन की निर्मलता और आत्मस्वरूप को जानने के आगे संसार का भय पानी भरने लग जाता है। मन की निर्मलता के कारण विवश और बँधा-बँधा हो जाता है। संत इसी भूमि पर हुंकारता है–निरभै राम जप हूँ रे भाई।

भक्ति में ब्रह्म, जीव, जगत-माया, निर्गुण-सगुण, शून्यवाद, सर्वात्मवाद भारतीय आध्यात्म की दार्शनिक भूमि से आते हैं, लेकिन संत का सबमें बँट-बँट जाना, अपने अनुभव की साझेदारी करना। अपने पास जो कुछ है उसे देते रहने का आचरण लोक से आया है। भक्तिकाल की असल गोचरभूमि लोक है। अनुभव का स्रोत है। कथन और करनी का साध्य लोक से प्राप्त हुआ है। भाषा की अर्थवत्ता लोक से प्राप्त हुई है। सारे उपमान, बिंब, प्रतीक और शब्दचित्र लोकसंगृहीत हैं। भक्तिकाल में भक्ति वैयक्तिक नहीं रही, वह समूह की शक्ति का साधन हो जाती है। भेक्तिकाल लोक से रससिक्त है और वह लोकजागरण की गौभूमि भी है।

भक्तिकालीन संत गृहस्थ हैं। वह लोक के सदस्य भी हैं, साथी भी हैं, मार्गदर्शक भी हैं, साधारण भी हैं और असाधारण भी हैं। जो गृहस्थ नहीं हैं, वे अपनी रचनाओं में गृहस्थ को उसकी गरिमा और महिमा में भक्ति का सहायक आधार देते हैं। यह गृहस्थधर्म कर्म से जुड़ा हुआ है। भक्ति के लिए पुरुषार्थ की महत्ता संत-भक्त बताते हैं। यह संसार त्यागने योग्य नहीं, रहने योग्य है। गृहस्थ निरंतर संघर्ष करता है। भक्तिकाल अपने देशकाल, वातावरण से प्रभावित है। इस काल की कविता सांस्कृतिक संघर्ष की कविता है। संत कबीर कपड़ा बुनते हैं। परिवार पालते हैं। फक्कड़

और मस्त रहकर भक्ति का मर्म जानते हैं। भक्त होकर सबमें बँट-बँट जाते हैं। सबके हाथ में कुछ-न-कुछ है। किसी के हाथ में ताना-बाना है। किसी के हाथ में रापी है। किसी के हाथ में मंजीरा है, किसी के पाँव में घुँघरू हैं। जिनके हाथ में ऐसा कुछ नहीं है, उन्होंने अपने आराध्यों के हाथ में बाँसुरी और धनुषबाण धारण करा रखे हैं। ये कर्म के प्रतीक हैं। भक्तिकालीन संतों ने ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग को एकरस कर दिया है। बिना ज्ञान के भक्ति बोझ होती है। वह आडंबर और कर्मकांड के प्रदेश में जा सकती है। बिना भक्ति के ज्ञान नीरस और बोझ हो जाता है। ज्ञान की सार्थकता तभी है, जब वह कर्म करते हुए प्राप्त होता है। कर्म की धन्यता इसमें है कि प्रत्येक कर्म भक्ति हो जाए। तब कपड़ा बुनना भी भक्ति है।

भक्तिकाल ने लोकभूमि को अपने ज्ञान-संवेदन से इतना मनोरम बनाया है कि ब्रज में रहकर और अवध की गलियों में घूमकर लगता है कि जन्म-जन्मांतर का पुण्यफल हाथ आ गया हो। कबीर की आत्मा भी निर्गुण निराकार ईश्वर को लोकपंथ की धूल में खड़ी प्रिय की प्रतीक्षा करती है। जायसी तो भारतीय लोक का ज्ञाता कवि हैं। उनकी नागमती न चितौड़गढ़ में रहती है और न रतनसेन। रतनसेन और पद्मावती राजमहल में नहीं मिलते, लोकभूमि पर बने शिव-मंदिर में मिलते हैं। संतों का यह लोक बहुत भाव-समृद्ध है। जिनका घर परिवार नहीं था, उन्होंने ऐसा शब्द चित्र बनाया कि प्रत्येक भारतीय के मन में उस तरह के घर की चाह पैदा हो जाती है। घर है, आँगन है। आँगन में घुटने-घुटने चलता हुआ, सुंदर बालक है। कभी वह हाथ में माखन लेकर खंभे में उभरे प्रतिबिंब को खिलाता है। राम और कृष्ण दोनों की ही यात्राएँ लोक की ओर हैं। घर से वन की ओर हैं। एक आदर्श गृहस्थ भी है। एक आदर्श समाज भी है। लोकमर्यादा भी है। लोकरंजन भी है। इनके बीच संतत्व है और भक्ति भी है।

जिस दलित विमर्श और स्त्री विमर्श का हल्ला बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में मचाया गया, वह संतों की कथनी करनी युक्ति पहल के सामने बिल्कुल नीरस-सा लगता है। संतों ने न सिर्फ कहा-'जाति पाँति पूछे नहीं कोई।' बल्कि उन्होंने सचमुच जाति-पाँति को छोड़ा और एक जमात में बैठे। सामूहिक भोजन बनाकर एक पंगत में बैठे। सभी जाति के लोगो को भोजन खिलाया और खुद भी उस पंगत में बैठकर भोजन किया। गाँधीजी ने स्वतंत्रता-आंदोलन के साथ-साथ सामाजिक सुधार की प्रक्रिया में यही कहा था कि अधिक-से-अधिक दलितों के संपर्क में आकर उनमें आत्मविश्वास जगाओ। उनके साथ भोजन करो। संतों ने अपनी कथनी और करनी से सामाजिक जागरण और नवनिर्माण की राह बनाई। सीता से वापस अयोध्या लौटने के लिए राम आग्रह करते हैं किंतु सीता विनम्रता से आग्रह ठुकराकर जिस धरती से पैदा होती हैं, उसी में समा जाती हैं। ठीक यहीं से नारी-मुक्ति का स्वर फूटता है और वह गूँजता हुआ मेवाड़ की रानी मीराँ तक आता है। मीराँ संत-भक्त समाज की शोभा बन जाती हैं। राणा की एक न मानी। राणा पराजित हुए। मीराँ जीत गई। राजा हारा और प्रजा जीत गई। मीराँ की भक्ति तो अमर हुई ही, भक्ति की शक्ति भी खिल उठी है।

भक्तिकालीन संत भारतीय जीवन दर्शन के मूलतत्त्व की खोज करते हैं। गृहस्थ जीवन के बीच भक्ति का चरम पा लेना आसान नहीं है किंतु भक्तिकाल के भक्त उसे सहज बना देते हैं। पंडों-पुरोहितों, मौलवियों का एकाधिकार धर्म पर से समाप्त करते हैं। कर्मकांड की जगह धर्म के वास्तविक रूप को भोले लोगों के सामने प्रकट करते हैं। मन ही मंदिर बन जाता है। गृहस्थ रहते

 ISSN 0975-735X

हुए निर्मल मन से किया जानेवाला कर्म भक्ति ही है। इसलिए घर छोड़ना नहीं। जल में कमल की तरह रहना। प्रेम में सब-कुछ पार कर जाने की और सब-कुछ को नष्टकर अनचाहा-मनचाहा पा जाने की। लेकिन ये प्रेम-पिपासे-आकुल-व्याकुल-बावरे-अर्धनग्न शरीर यह नहीं जानते कि 'प्रेम न बाड़ी उपजै, प्रेम न हाट बिकाय, राजा-प्रजा, जिहिं रुचै, सीस देहिं लै जाय' यह खाला का घर नहीं है, तलवार की धार पै धावनो है। प्रेम देह-जनित नहीं है, हृदय की धड़कन है। देह-जनित तो वासना होती है। संतों ने प्रेम की पवित्रता को भक्ति की अनिवार्यता अनुभव कर उसे सबके लिए सरल और साध्य बना दिया। आज सर्वाधिक जरूरत संवेदना की है। जीवन को यंत्रचालित युग ने जकड़ लिया है। चारों ओर मशीनों की खटर-पटर और पी-पों है, ऐसे में व्यक्ति की न चीख सुनाई दे रही है, न पुकार, न प्रेम। ऐसे संवेदनहीन समय में भक्तिकाल की वाणी कंदील का काम करती है।

भक्तिकालीन साहित्य संवेदनाओं की बहती मर्यादा है। जहाँ स्वयं को तृप्त करने साथ साधु को भूखा न जाने देने की प्रार्थना है। संवेदना की अनेकरंगी कलियाँ संतों की वाणी में खिलती हैं, जिनकी सुवास में प्राणी-मात्र अपने भीतर-बाहर के मौसम से संवाद करता है। आज सबसे अधिक नुकसान संवेदना का है। संवेदनहीनता की स्थिति में जाकर ही हम आज बेतुके सवाल खड़े करने लगे हैं कि आज संतसाहित्य की क्या उपयोगिता है, यह हमारे भीतर धँसी बौद्धिक यंत्रणा की उपज है। देह के स्तर पर इतने लुभा गए और लुभावने हो गए हैं कि आँखें चमड़ी को छोड़कर नस-नस में घुसने से कतराने लगी हैं। हृदय में उतरना साहस का काम है। पहाड़ चढ़ना आसान है, हृदय में उतरना कठिन है। हृदय का पथ भावों का है। 'कबीरा आप ठगाइए और न ठगिए कोय।' स्वयं को ठगे जाने का स्वाद और सुख संतों ने चाखा है।

आज सब एक-दूसरे को ठगने में लगे हैं। संवेदना और भावों की गली बहुत तंग है। यहाँ अकेला ही चलना होता है। बहुत धीरज और प्रतीक्षा करनी होती है। संतों ने यही सीख दी। आज धीरज हर क्षेत्र से कम हो गया है। सब-कुछ कम-से-कम समय में बिना मेहनत के पा जाना चाहते हैं। बिना श्रम और साधना के प्राप्त फल का भोग पेट का फोड़ा बनकर फूटता है। संत कहते हैं-'साधू कहावत कठिण है, जैसे पेड़ खजूर। चढ़ैं तो पीवै प्रेम रस, गिरे तो चकनाचूर।' भक्तिकालीन संतसाहित्य कोरा भावोन्माद नहीं है, बल्कि व्यक्तिगत सामाजिक, राष्ट्रीय और वैश्विक जीवन में उसकी प्रभावकारी भूमिका है। उसकी अपनी सामाजिक सत्ता है। उसकी अपनी निजी सत्ता भी है। भक्तिकाव्य ने हृदय का बहुत विस्तार किया। संतों ने अपने स्तर पर कार्य करते हुए अपना विस्तार किया। अपनी प्यास को इतना तीव्र और अविकल किया कि वह सबकी प्यास बन गई। प्यास इतनी जागी कि वह पूर्ण होते-होते परमात्मा तक चली जाती है। पुकार में इतनी द्रवणशीलता है कि वह प्रार्थना हो जाती है और प्रार्थना की पूर्णता परमात्मा बन जाती है।

आज चौतरफा बाजार की मार है। बाजार में ठगने-लुटने की तरकीबें की जा रही हैं। बाजार की पूरी कोशिश यह है कि व्यक्ति की जेब से पैसा कैसे निकाला जाए। वस्तु आदमी की पीठ पर सवार होकर उसके घर तक आती है और उसके घर में बैठ जाती है। घर, घर होते हुए भी घर नहीं रह पाता। संतों ने बाजार को चुनौती दी-'कबीरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ।' लुकाठी कबीर ने बाजार से आदमी को सचेत करने और बाजार पर वार करने के लिए हाथ में रख रखी है। तब मथुरा से एक उद्धव ब्रज में आते हैं। मथुरा महानगर है। ब्रज गाँव है। गोपियाँ उद्धव को

अच्छी तरह समझ लेती हैं। गोपियाँ सचेत होती हैं–'आयौ घोष बड़ौ व्योपारी।' और फिर उद्धव को खबरदार करते हुए कहती हैं–'जोग ठगोरी ब्रज न बिकैहैं।' तब तक उद्धव आते हैं, गोपियाँ पूरे वृंदावन को उसके प्रभाव से बचा लेती हैं। हम यह नहीं जानते कि अंधे सूरदास को यह बात कैसे सूझी होगी कि उसने जिस कृष्ण को गढ़ा, वह कृष्ण मथुरा का नहीं, गाँव का है। वह गोकुल में खेलता है और बड़ा होता है। वह खेल-खेल में गोपियों को गोकुल का दूध-दही मथुरा ले जाकर बेचने से रोकता है। गोकुल की वस्तु मथुरा में नहीं जानी चाहिए। गाँव की वस्तु गाँव में ही रहे, तो एक पीढ़ी बड़ी होगी और गाँव, गाँव बना रहेगा।

भक्तिकाल लोक की प्रतिष्ठा करनेवाला काव्य है। संतों ने कहा 'जात न पूछौ साधू की, पूछ लीजिए ज्ञान।' ज्ञान की इस देश ने कदर की। गुणवान की पूजा की। जिन संतों ने जाति-पाँति का विरोध किया और जो पूरे विश्व के पूज्य हैं, उन्हीं को जाति और वादों के आधार पर बाँटा जा रहा है। भारतीय समाज के लिए यह खतरनाक है। जो लोग कबीर और तुलसी की लकड़ी और लँगोटी को लेकर साहित्य में फाँक पैदा कर रहे हैं, उन्हें अपने अपने खेमों में घसीट रहे हैं, वे जातिवाद समर्थक नासमझों से भी बड़ा पाप कर रहे हैं। जिस तरह पानी में फाँक नहीं होती, उसी तरह साहित्यकारों-संतों की जाति और खेमे नहीं होते।

कबीरदास ने चौराहे पर खड़े होकर अपने प्रियतम को पुकारा 'राम बिन तन की ताप न जाई, जल में अगनि उठी अधिकाई।' कबीर के सारे चेले-चपाटे, संगी-साथी, घर-दुवारी गा उठते हैं। भक्ति की महिमा जानिए कि कृष्ण नाच रहे हैं। सारी गोपियाँ नाच उठी हैं। यह अद्‌भुत बात है कि भक्त और भगवान दोनों नाच रहे हैं। भक्तिकाल का यह नाच-गाना साधना का सोपान बन जाता है।

कुल मिलाकर निष्कर्ष रूप यह कहा जा सकता है कि भक्तिकालीन संतसाहित्य में लोकानुभव, लोकधरती, लोकाचार, लोकाचरण और लोकव्यवहार की पंच सरिता जल से अपना काव्य-कलश भरते हैं। विश्वकल्याण हेतु गीत गाकर स्वयं आनंदित होते हैं और जग को आनंदविभोर कर उसके पाँवों में घुँघरू और हाथ में मंजीरे देकर नचा देते हैं। लोकभाषा संतों की रसवाणी का सान्निध्य पाकर काव्यभाषा बन जाती है। संतों ने अपना अनुभव अपनी भाषा में अपने लोगों के बीच गाया गया है। भक्तिकाल के साहित्य की जन-जन में गहरी पैठ का एक बड़ा कारण लोकभाषा में आत्माभिव्यक्ति और काव्याभिव्यक्ति है। भक्तिकालीन काव्य संतों की आत्मा की पुकार है। यह पूरा साहित्य एक प्रार्थना है। यह अनुभव की आँच है। यह भावों की सरिता है। भक्तिकालीन संतसाहित्य हमारी सांस्कृतिक धरोहर है। इसकी रक्षा तो आवश्यक है। साथ-ही-साथ साहित्य का श्रवण, पठन और मनन आज और अधिक जरूरी हो गया है।

मो॰ 9422721163

 ISSN 0975-735X

MAH/MUL/ 03051/2012 ISSN :2319 9318

आंतरविद्याशाखीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

# विद्यावार्ता™

Jan. To March 2021
Issue 37, Vol-04

Date of Publication
01 Feb. 2021

Editor
Dr. Bapu g. Gholap
(M.A.Mar.& Pol.Sci.,B.Ed.Ph.D.NET.)

विद्येविना मति गेली, मतीविना नीति गेली
नीतिविना गति गेली, गतिविना वित्त गेले
वित्तविना शूद्र खचले, इतके अनर्थ एका अविद्येने केले

-महात्मा ज्योतीराव फुले

❖ विद्यावार्ता या आंतरविद्याशाखीय बहूभाषिक त्रैमासिकात व्यक्त झालेल्या मतांशी मालक, प्रकाशक, मुद्रक, संपादक सहमत असतीलच असे नाही. न्यायक्षेत्र:बीड

"Printed by: **Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.** Published by **Ghodke Archana Rajendra** & Printed & published at Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.,At.Post. Limbaganesh Dist,Beed -431122 (Maharashtra) and Editor **Dr. Gholap Bapu Ganpat**.

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205
Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed
Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295
harshwardhanpubli@gmail.com, vidyawarta@gmail.com
All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors / www.vidyawarta.com

26) मराठी लोकगीतों में मायके का वर्णन : एक अनुशीलन
**डॉ.बबन चौरे, जि. अहमदनगर (महाराष्ट्र)** ||106

27) गरियाबंद जिले में कमार जनजातीय महिलाओं में रोजगार का स्वरूप एवं प्रवृत्ति
**डॉ. श्रध्दा गिरोलकर, रायपर (छ.ग.)** ||115

28) भारतीय संविधान और गाँधीजी के आदर्श
**डॉ. बीना गुप्त, Tikamgarh** ||119

29) साठोत्तरी हिंदी गजल में विविध संदर्भों का बोध
**प्रा.डॉ. दिलीप कोंडीबा कसबे, सांगोला** ||123

30) कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रयोग एवं मारुति उद्योग लिमिटेड
**डॉ. संजय जैन & डॉ. बन्दना खरे, भोपाल(म.प्र.)** ||126

31) सरदार पटेल का मानस भारत
**कुलदीप सिंह & डॉ० सुधा गुप्ता, जनपद जालौन** ||134

32)बंजारा समाज में लोक संस्कार : एक विहंगावलोकन
**लाउरि विजय लक्ष्मी, तेलंगना** ||142

33) कोरोना महामारी, एक समाजशास्त्रीय अध्ययन
**डॉ.अरुणिमा पाण्डेय & डॉ.ज्योति जोशी, हल्द्वानी (नैनीताल)** ||146

34) सूर्यकांत नागर का साहित्य और आधुनिकता
**डॉ. जयलक्ष्मी एफ.पाटील, धारवाड** ||152

35) काव्य में प्रगतिशील चेतना, प्रभाकर श्रोत्रिय के साहित्य का योगदान
**प्रा. पवार बळीराम प्रभु & डॉ. प्रा. गोपाळ स. भोसले, जि. बीड** ||156

36) उच्च शिक्षा में संप्रेषण कौशल की भूमिका
**डॉ. आबासाहेब हरिभाऊ राठोड, ता.जि. बीड** ||159

37) वैश्विक शान्ति एवं समृद्धि में आज की शिक्षा
**डा० संजीव कुमार, मुजफ्फरपुर** ||161

38) भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का विस्तार : बिहार के संदर्भ में
**विकल कुमार, बोधगया** ||165

www.vidyawarta.com/03 | http://www.printingarea.blogspot.com

36

# उच्च शिक्षा में संप्रेषण कौशल की भूमिका

**डॉ. आबासाहेब हरिभाऊ राठोड**
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
सौ.के.एस.के. महाविद्यालय, बीड, ता.जि. बीड

***********

आधुनिक युग वैश्विकरण का युग है । शिक्षा के क्षेत्र में संप्रेषण कौशल के माध्यम से सफलता संभव है । इसका कारण प्रारंम्भिक कक्षाओं से लेकर उच्च कक्षाओं, दूरस्थ शिक्षा एवं व्यावसायिक कक्षाओं की शिक्षा में संप्रेषण कौशल का प्रयोग किया जा रहा है । जीवन में जिस तरह श्वासोच्छवास की प्रक्रिया जितनी सहज है उतना ही सहज है संप्रेषण । जन्म के साथ ही मानव की संप्रेषण प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है, जो व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बनकर साथ निभाती है । शिक्षा के क्षेत्र में भी इस वैश्विकरण के काल में कम्प्युटर, स्लाइड, प्रोजेक्टर, फिल्में, चित्र, ग्राफचार्ट, इन्टरनेट, वीडिओ—आडियो, टेलीकॉन्फरन्स आदि शैक्षिक संप्रेषण के माध्यमों का उपयोग किया जा रहा है ।

संप्रेषण शब्द दो शब्दों के मेल से बना है । समप्रेषण अर्थात जो प्रेषित किया गया है । अंग्रेजी भाषा में संप्रेषण के लिए कम्युनिकेशन शब्द का प्रयोग होता है । कम्युनिकेशन शब्द की उत्पत्ति लॅटीन भाषा के कम्युनिस शब्द से मानी जाती है । लॅटीन भाषा में कम्युनिस से आशय सामान्य बनाने से लिया जाता है अर्थात किस बात को मैं जानता हूँ कोई अन्य नहीं जानता तो उस बात या तथ्यों को दूसरों को संप्रेषित कर उसे सामान्य बना देता है । संप्रेषण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति परस्पर सामान्य के माध्यम से आदान—प्रदान करने का प्रयास करता है । साथ ही भाषा की बाधाओं के कारण संप्रेषण कौशल को बुरी तरह प्रभावित करती है । जैसे कि, वाणी दोष, अस्पष्ट शब्द, श्रवण दोष आदि । भौतिक संप्रेषण कौशल में विकलांगता, शारीरिक अस्वस्थता, ध्यान केंद्रित न कर पाना, यंत्र दोष आदि के कारण बाधाएँ उत्पन्न होती है । ध्वनि प्रदूषण, अनिच्छा पूर्व अनुभव भावनाओं के प्रभाव के कारण भी संप्रेषण कौशल में बाधाएँ आती रहती है ।

संप्रेषण एक सतत प्रक्रिया है । इसमें किसी भी दशा में किसी प्रकार का कोई अवरोध नहीं होता । संप्रेषण का उद्देश्य होता है सूचनाओं को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति और एक समूह से दूसरे समूह तक पहूँचाना होता है । संप्रेषण एक कला है, जो समस्त मानवीय सम्बन्धो के लिए अनिवार्य भी है । संप्रेषण की निम्न विधियाँ प्रयोग में लाई जा सकती है ।

**एकतरफा संप्रेषण :**

इसमें सूचनाओं का प्रवाह एक तरफा होता है । इसकी कमी यह कि सीखनेवाला कितना समझ पाता है ।

**दो तरफा संप्रेषण :**

इसमें सीखनेवाला संदेश सुनता है तथा उसे समझने एवं उसके प्रति पूरी तरह आश्वस्त होने के क्रम में संप्रेषक से प्रश्न पुछ सकता है । यह विधि एक तरफा संप्रेषण की अपेक्षा अधिक सफल एवं प्रभावोत्पादक होती है ।

**मौखिक संप्रेषण :**

आमने सामने भाषा का उपयोग करके सीखनेवालों को अपनी बात कही जाती है ।

**गैर—मौखिक संप्रेषण :**

इसमें शब्दों के प्रयोग के अलावा शारीरिक हावभाव जैसे मुस्काराना, घूरना आदि के द्वारा अपनी बात श्रोताओं एवं दर्शकों तक पहुँचायी जाती है ।

आज संचार प्रौद्योगिकी में सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान समस्त दुनिया को एक संजाल में जोडनेवाली अत्याधुनिक विकसित संचार प्रणाली इंटरनेट की है । यह विश्व के किसी भी कोने में रहकर शीघ्रतम सूचनाओं के आदान प्रदान की विश्वस्तरीय सेवा उपलब्ध कराता है ।

वर्तमान में शैक्षिक सूचना तकनीकी का ज्यादातर उपयोग और लाभदायक दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र

में है । आधुनिक संप्रेषण कौशल की देन ही है कि एक जिज्ञासू व्यक्ति का कार्यरत व्यक्ति घर बैठे अपनी योग्यता को आगे बढने के लिए इसके माध्यम से किसी भी क्षेत्र में ज्ञान प्राप्त कर सकता है । इस कारण शैक्षिक सूचना तकनीकी के अंतर्गत वाक्य के पढने एवं सुनने की अपेक्षा, उस वस्तू तथा प्रक्रिया को प्रोजेक्टर, टी.पी. स्लाइड, टैप, कम्प्युटर, इन्टरनेट आदि से दिखाया, सुनाया और प्रदर्शित किया जाता है । आज के दौर में शिक्षा की माँग को पूरा करने के लिए तथा छात्रों की शैक्षणिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपर्युक्त संप्रेषण कौशल का महत्त्व अधिक रहा है । छात्रों की योग्यतानुसार पाठ्य साम्रगी को बोधगम्य एवं उन्हें जागरुक बनाने के लिए ये अच्छे उपकरण है । इन्हें शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सरल सुबोध एवं सुगम बनाने के लिए किया जाता है । शिक्षा के सभी रुपों में प्रमुख भूमिका का निर्वाह करते है ।

शैक्षणिक दूरदर्शन सम्प्रेषण तथा प्रसारण का एक प्रमुख साधन है । शिक्षा कें प्रत्येक स्तर की बाधाओं को दूर करने का यह प्रभावशाली साधन है । शैक्षिक दूरदर्शन के द्वारा सम्पूर्ण संसार को एक कक्षा का स्वरुप प्रदान किया जा सकता है एवंम् कक्षा को घर के स्वरुप में बदला जा सकता है । भारत में दूरदर्शन जनसामान्य के लिए प्रभावी शिक्षा का माध्यम है । शिक्षा जगत में विशेषकर उच्च शिक्षा में बेहतर शिक्षण व्यवस्था में तकनीकी प्रयोग कम्प्युटर के रुप में किया जा रहा है । कम्प्युटर का उपयोग शिक्षा प्रशासन, राजनीति, नव बाजार व्यवस्था, उद्योग व्यापार, सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था में किया जा रहा है । भारतीय स्थिति में रेडिओ जागरुकता के निर्माण में प्रभावशाली माध्यम है । भारत जैसे बहुसांस्कृतिक एवं बहुभाषी देश में आकाशवाणी २४ भाषाओं और १४६ बोलिओं में प्रसारण कर रहा है । आकाशवाणी की प्रसारण सेवाएँ मीडियम वेब, शॉर्ट वेब और एफ.एम. में उपलब्ध है । देश में दूरदर्शन ही केवल एक जनसेवा दूरदर्शन प्रसारक है जो ग्रामीण और शहरी इलाकों समेत सभी भू—भागीय और समाज के सभी क्षेत्रों के लोगों तक पहूँचा है ।

शैक्षणिक जगत से लोकप्रिय जन समाज तक इंटरनेट को प्रस्तुत करने का श्रेय वर्ल्ड वाइड वेब की प्रवाहशीलन को जाता है। वर्तमान में टेलिफोन टेलिविजन और कम्प्युटर शैक्षिक जगत के लिए महत्त्वपूर्ण है । संप्रेषण माध्यम के कारण नवीन ज्ञान प्राप्त होता है ।

कुल मिलकर हम यह कह सकते है कि मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के कारण वह समाज में रहकर शैक्षिक उपलब्धि को प्राप्त करता है । जिन व्यक्तिओं में शैक्षिक उपलब्धि अधिक होती है। वे अपने जीवन में उच्चस्तर की शिक्षा प्राप्त करने हेतु प्रयासरत रहता है । शिक्षा को शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया की सफलता हेतु एक मित्र दार्शनिक तथा एक प्रदर्शक की भूमिका निभाता है ।

❑❑❑

RNI No. MAHAUL03008/13/1/2012-TC

# POWER OF KNOWLEDGE

**An International Multilingual Quarterly Peer Review Refereed Research Journal**

**Editor**
**Dr. Sadashiv H. Sarkate**

**● Mailing Address ●**
**Dr. Sadashiv H. Sarkate**
**Editor : POWER OF KNOWLEDGE**
**Head of Dept. Marathi**
Art's & Science College, Shivajinagar, Gadhi, Tq. Georai Dist. Beed-431 143 (M.S.)
Cell. No. 9420029115 / 7875827115
Email : powerofknowledge3@gmail.com /
shsarkate@gmail.com

**Price : Rs. 300/-**
**Annual Subscription: Rs. 1000/-**

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1 | राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज यांच्या साहित्यातील मानवतावाद | डॉ.मनोहर आंबटकर<br>डॉ. मिलिंद कांबळे | 1-5 |
| 2 | विमुक्त भटक्यांच्या चळवळीला दिशा देणारे आत्मकथन: 'कत्ती' | डॉ.मारोती कसाब | 6-9 |
| 3 | कुसुमाग्रजांची राष्ट्रीय कविता: एक आस्वाद | प्रा.डॉ.विनोद उत्तमराव भालेराव | 10-15 |
| 4 | संत साहित्यातील संतकवियित्री | प्रा. डॉ. सुनंदा चरडे | 16-21 |
| 5 | राष्ट्रसंतांची 'ग्रामगीता'निर्मिती मागील भूमिका | डॉ. अविनाश श. धोबे | 22-25 |
| 6 | एकोणिसावे शतक : स्त्री व समाज | जागृती अरुण बधान | 26-29 |
| 7 | 'होळी' बंजारा समाजाचा सांस्कृतिक उत्सव | प्रा.डॉ.विनोद दे. राठोड | 30-33 |
| 8 | दलित आत्मकथनातील प्र.ई.सोनकांबळे यांचे समाजव्यवस्थेतील स्थान | प्रा.नामदेव शिनगारे | 34-37 |
| 9 | महारा ट्रातील दत्त संप्रदायकालीन सामाजिक स्थिती.गती : एक दृष्टीक्षेप | प्रा.डॉ.राजेंद्र सुखदेव चौधरी | 38-41 |
| 10 | आदिवासी नायकांचे स्वातंत्र्यासाठीचे योगदान | डॉ. विठ्ठल केदारी | 42-48 |
| 11 | भाषा आणि साहित्य : आंतरसंहितात्मक अभ्यास | डॉ.बालाजी घारुळे | 49-52 |
| 12 | गुलाममंडी उपन्यास में चित्रित पात्रों की समीक्षा | डॉ.बालकवि लक्ष्मण सुरंजे | 53-55 |
| 13 | इक्कीसवी सदी का मीडिया | प्रा. डॉ. बायजा कोटुळे | 56-60 |
| 14 | निराला के काव्य में राष्ट्रीय चेतना | डॉ. संतोष रामचंद्र आडे | 61-64 |
| 15 | ''अल्मा कबूतरी'' उपन्यास में अभिव्यक्त भाषाशैली एवं उद्देश्य | प्रीती अहिर<br>डॉ.बालकवि लक्ष्मण सुरंजे | 65-67 |
| 16 | कोरोना संकट में वैश्विक अर्थव्यवस्था और खेल उद्योग पर असर | डॉ.हेमंत वर्मा | 68-74 |
| 17 | आधुनिक हिंदी कहानियों में चित्रित वैवाहिक परिदृश्य | डॉ.ज्ञानेश्वर महाजन | 75-77 |
| 18 | सिनेमा और साहित्य | प्रा. डॉ. उत्तम जाधव | 78-80 |
| 19 | ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओ मे अभिव्यक्त आंबेडकरवादी चितन | प्रा.डॉ.रविंद्र आर. खरे | 81-86 |
| 20 | समकालीन दौर में साहित्य और सिनेमा की भूमिका | प्रोफेसर डॉ.आबासाहेब राठोड | 87-91 |
| 21 | महाराष्ट्रातील जलसिंचनातील असमोल : एक दृष्टिक्षेप | प्रा.रासकर भीष्मा रंगनाथ | 92-98 |
| 22 | भारताच्या नियोजन कालखंडातील शेतीचा विकास | डॉ. मुळे पी.एम. | 99-102 |
| 23 | धुळे जिल्ह्यातील धरणप्रभावित क्षेत्रांचा सामाजिक व आर्थिक अभ्यास | संजय नामदेवराव तोरवणे<br>प्राचार्य. डॉ. डी. एस. पाटील | 103-106 |

# समकालीन दौर में साहित्य और सिनेमा की भूमिका

**प्रोफेसर डॉ.आबासाहेब राठोड**
विभाग प्रमुख एवं शोध-निर्देशक
सौ.के.एस.के.महाविद्यालय, बीड ता.जि.बीड

साहित्य समाज का दर्पण होता है | समाज में जो घटित होता है वही साहित्य के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है | इसमें ही मनुष्य का हित समाहित किया जाता है | साहित्य और सिनेमा के माध्यम से मनुष्य के साथ साथ सामाजिक दायित्व को भी निभाया जाता है | जीवन और साहित्य का सम्बन्ध जितना सूक्ष्म है उतना व्यापक भी है | साहित्य की व्यापकता इस बात में है कि किसी भी देश जाति अथवा युग का साहित्य समूची मानवता को प्रभावित करने की शक्ति रखता है | अत: विश्वव्यापी मानवता की भावना के विकास के लिए साहित्य का कार्य महत्त्वपूर्ण है | साहित्य बाहरी दुनिया के साथ-साथ हमारे मन के भीतर की दुनिया का भी चित्रण करता है | वह हमारे जीवन को हमेशा नई-नई प्रेरणाओं से भरता है | इसलिए साहित्य का मानव जीवन में शाश्वत महत्त्व है | सिनेमा लोकप्रिय और रचनात्मक माध्यम है | वह प्रतिकों में गढ़ता है | उसमें कला और तकनीक का सम्मिश्रण है | कई विद्वान सिनेमा को आधुनिक युग का जादू कहते है | सिनेमा कला में एक तरह की व्यापकता है | वह अपनी बात को करोड़ो लोगों तक आसानी से पहूँचाता है | मनोरंजन के साथ समाज निर्माण में भी सिनेमा की भूमिका अग्रणी है |

साहित्य प्राचीन कला है और सिनेमा आधुनिक कला | मनुष्य की वृत्तियों के उदात्तीकरण और संवेदनशीलता के विकास में साहित्य की जो भूमिका है, नव प्रौद्योगिकी के युग में सिनेमा की भी ही है| जिस प्रकार साहित्य का समाज, संस्कृति, सभ्यता, इतिहास, भाषा आदि से गहरा रिश्ता है उसी प्रकार सिनेमा का भी है | साहित्य से हमें जीवन जीने की प्रेरणा और आनंद मिलता है | सिनेमा से हम मनोरंजन के साथ-साथ संदेश भी ग्रहण करते हैं| साहित्य और सिनेमा समाज के अभिन्न अंग है | दोनों के केंद्र में समाज ही होता है | साहित्यकार और फिल्मकार दोनों समाज से प्रभावित होते है और अपनी कला के माध्यम से समाज को प्रभावित भी करते हैं | भारतीय समाज पर सिनेमा का व्यापक प्रभाव है | वह सिनेमा से सबसे ज्यादा प्रभावित है | लेकिन मानव और मानव समाज के विकास में साहित्य की भूमिका विशेष रुप से उल्लेखनीय है | साहित्य का ध्येय समाज का हित है और सिनेमा का ध्येय समाज का मनोरंजन करना है और उसे आईना दिखाना है |

साहित्य और सिनेमा दो अलग कलारुप है | साहित्य एकल कला है तो सिनेमा सामूहिक कला है | साहित्य तकनीक पर निर्भर नहीं, लेकिन सिनेमा अधिकतर तकनीक पर ही निर्भर है | साहित्य सस्ता माध्यम है, पर सिनेमा अति महँगा माध्यम है | साहित्य के पाठकों को यह अच्छी तरह से समझना होगा कि साहित्य और सिनेमा में अंतर है | साहित्य की कसौटी पर सिनेमा का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता | साहित्य में जिस प्रकार शब्द, वाक्य, अनुच्छेद होते है, उसी प्रकार सिनेमा में शॉट, सीन, सीक्वेल होते हैं | साहित्य में कथा-कथोपकथन होता है | वैसे सिनेमा में पटकथा-संवाद होते हैं | साहित्य में जिस प्रकार कविता होती है, उसी प्रकार सिनेमा में गीत होते है | साहित्य की एक विधा

नाटक और सिनेमा में स्पष्ट अंतर होने के बावजूद भी सिनेमा का स्वरुप नाटक के अत्यन्त निकट प्रतीत होता है | सिनेमा में विशेषत: हिंदी सिनेमा में कहानी, उपन्यास, नाटक, जीवनी, आत्मकथा, कविता, पत्र-डायरी, संस्मरण, गजल आदि साहित्य की कई विधाएँ प्रयुक्त होती हैं| दुनिया की अधिकांश आबादी आज सिनेमा से प्रभावित है | सिनेमा के सम्मोहन से आज कोई भी राष्ट्र अछूता नहीं है | आज भारत में हर वर्ष औसतन एक हजार फिल्में बनती है | फिल्म निर्माण के क्षेत्र में भारत का दुनिया में पहला क्रमांक है | बॉलीवूड या हिंदी सिनेमा आज भारतीय सिनेमा की पहचान बन गया है |

भारत में सिनेमा की शुरुआत धार्मिक विषयों को लेकर हुई | इन फिल्मों ने समाज प्रबोधन का कार्य किया | उसके बाद हम देखतें हैं कि निर्देशकों ने धार्मिक विषयों को छोड़कर तत्कालीन सामाजिक समस्याओं पर अपना ध्यान केंद्रित किया | देशभक्ति पर फिल्में भी बनने लगी | इन फिल्मों ने अंग्रेजों के खिलाफ वातावरण तैयार किया और जनता में आजादी की ललक जगाई | साथ ही कुछ फिल्मों ने सामाजिक बुराईयों के प्रति देशवासिओं को जागरुक किया | आजादी के बाद सिनेमा में राष्ट्रवाद का पुट दिखाई देने लगा | इक्कीसवीं सदी तक आते-आते हिंदी सिनेमा हिंसा और अश्लीलता के भँवर में इस कदर फँस गया है कि आज भी वह इसी के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहा है | हिंदी सिनेमा के विभिन्न विषय समाज से गहरा संबंध रखते हैं | भारतीय समाज-जाति व्यवस्था, भ्रष्टाचार, नक्सलवाद, संगठित गुनहगारी, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, किसान आत्महत्या, कन्या शिशुहत्या, वेश्यावृत्ति, बलात्कार, विवाहेत्तर संबंध, समलैंगिकता आदि कई समस्याओं से घिरा हुआ है | फिल्म निर्देशकों ने इन समस्याओं को फिल्मों के माध्यम से समाज के सामने रखा | अपने दृष्टिकोन से समस्या का समाधान देने का प्रयास भी किया | स्पष्ट है कि सिनेमा के विविध विषयों में भारतीय समाज का प्रतिबिम्ब झलकता है | सिनेमा का समाज पर सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव देखा जा सकता है, समाज में बढ़ रही हिंसा और अश्लीलता के लिए सिनेमा बहुत हद तक जिम्मेदार है | सिनेमा के कारण आज अधिकांश युवा वर्ग पथभ्रष्ट हो रहा है |

सिनेमा जगत ने पारंपारिक भारतीय मूल्यों को बचाकर रखने में भी मदद की है | हिंदी सिनेमा ने समाज में रचनात्मक परिवर्तन लाने को प्रयास किया और अब वह मनोरंजन के साथ जागरुकता और सामाजिक परिवर्तन का भी महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहा है |

सिनेमा भी आधुनिक युग की ही उपलब्धि है | तकनीकी विकास के साथ सिनेमा का विकास हुआ है | दृश्य-श्रव्य होने के कारण फिल्म आज एक लोकप्रिय माध्यम है | जनमानस पर इसका गहरा और व्यापक प्रभाव है | एक अच्छी साहित्यकृति भी चंद पाठकों तक ही पहूँचती है, लेकिन एक अच्छी फिल्म को दुनिया के कोने कोने में लोग देखते हैं | एक अच्छा लेखक भी कुछ पाठकों तक सीमित होकर रह जाता हैं लेकिन एक अच्छा फिल्मकार लाखों-करोड़ों लोगों तक पहूँचता है | साहित्य और फिल्म दोनों की विषयवस्तु मानवीय जीवन प्रसंग या घटना प्रसंग होते हैं | साहित्यकार सृजन करते समय शब्दों के माध्यम से घटना प्रसंगों को पाठकों तक पहुँचाने का प्रयास करता है, किंतु उसी कथा पर फिल्म निर्माण की प्रक्रिया शुरु होती है तब पटकथा तथा संवाद लेखक शब्द नहीं बल्कि दृश्य लिखता है | दृश्यों के माध्यम से वह दर्शकों तक कथा को पहूँचाता हैं | इस कारण एक ओर साहित्य और सिनेमा

की दुनिया परस्पर पूरक बनेगी तो दूसरी ओर सिनेमा के लिए आवश्यक कथाभूमि का योगदान साहित्य देता रहेगा |

हिंदी उपन्यास पर आधारीत जिन फिल्मों का सफल फिल्मांकन हुआ है वे फिल्में हैं - गबन, डाक बंगला, आंधी, मौसम, बदनाम बस्ती, सारा आकाश, सत्ताईस डाऊन, तमस, सूरज का सातवाँ घोड़ा, नौकर की कमीज साथ में जिन फिल्मों का असफल फिल्मांकन हुआ है वे फिल्में हैं - गोदान, सेवासदन, रंगभूमि, आपका बंटी, चित्रलेखा, धर्मपुत्र, त्यागपत्र, नदिया के पार | हिंदी कहानी पर बनी जिन फिल्मों का सफल फिल्मांकन हुआ है वे फिल्में है - हीरा मोती, शतरंज के खिलाड़ी, सद्गति, उसकी रोटी, तीसरी कसम, माया दर्पण, रजनीगंधा, पतंग, मोहनदास और जिन फिल्मों का असफल फिल्मांकन हुआ है वे फिल्में है - तलाश, रंग-बिरंगी, उसने कहा था, त्रिया चरित्र, पंचवटी, सतह से उठता आदमी, अनवर | हिंदी नाटक पर आधारित फिल्म धूपछाँव और आषाढ़ हा एक दिन का सफल फिल्मांकन हुआ है |

बांग्ला लेखक शरतचंद्र के उपन्यास 'देवदास' पर हिंदी में चार फिल्में बनी और कमोवेश सभी सफल रही, प्रेमचंद की कहानी 'शतरंज के खिलाडी' पर सत्यजीत रॉय ने इसी नाम से फिल्म बनाई, जो वैश्विक स्तर पर सराही गई | भगवतीचरण वर्मा के अमर उपन्यास 'चित्रलेखा' पर भी फिल्में बनीं, जिनमें एक सफल रही | बाद में साहित्यिक कृतियों पर आधारित फिल्मों को आर्ट फिल्मों के खांचे मे रखकर इनका व्यावसायिक और हिट फिल्मों से अलगाव कायम करने का प्रयास किया गया, जिससे ऐसी फिल्मों का आर्थिक पहलू प्रश्नचिन्हांकित हो गया और फिल्मकारों ने साहित्यिक कृतियों पर फिल्म बनाने से परहेज करना शुरु कर दिया | इसका परिणाम यह हुआ कि 'एंग्री यंग मैन' युग आ गया और यथार्थ से कटी हुई अतिरंजनापूर्ण 'अमिताभीय' फिल्मों का दौर आ गया | मैं इस दौर को हिंदी सिनेमा का 'अंधकार युग' मानता हूँ, जिससें हमें नवें दशक में आकर मुक्ति मिल सकी, यह युग वस्तुत समाज की सोच, उसकी आकांक्षाओं एवं उसकें स्वप्नों से कटा हुआ था और इसमें आम जनता की सहभागिता नगण्यप्राय थी | साहित्य और सिनेमा के अन्तर्सम्बन्धों पर गुजराती फिल्म समीक्षक बकुल टेलर ने बेहद सारगर्भित टिप्पणी की है | उनका कहना है, **"साहित्यिक कृतियों पर बनी फिल्म अपने आप अच्छी हो, ऐसा नहीं होता | वास्तविकता यह है कि साहित्यिक कृति का सौन्दर्यशास्त्र और सिनेमा का सौन्दर्यशास्त्र अलग-अलग हैं |"**

एक अन्य तथ्य यह भी उल्लेखनीय है कि कई बार गलत पात्र चयन से भी साहित्यिक फिल्मों की आत्मा मर जाया करती है | इसका सबसे सटीक उदाहरण **'गोदान'** फिल्म का है | जिसमें होरी की भूमिका में अभिनेता राजकुमार को ले लेने से यह फिल्म अविश्वसनीय लगने लगी क्योंकि दमदार डायलॉग बोलने वाले राजकुमार कहीं से भी दीन-हीन होरी के रोल में फिट नहीं थे | इसके अलावा कृति के मुताबिक परिवेश का अंकन भी फिल्मकारों के लिए बड़ी चुनौती होती है | उदाहरण के लिए बंकिमचंद्र की कृति पर बनी **'आनंदमठ'**, विमल मित्र कृत **'साहब बीबी और गुलाम'**, आर.के. नारायण के अंग्रेज़ी उपन्यास पर बनी **'गाइड'**, इडिया लेखक फकीर मोहन सेनापति की रचना पर बनी **'दो बीघा ज़मीन'** और मिर्ज़ा हादी की उर्दू कृति पर बनी **'उमराव जान'** फिल्मों की सफलता का सबसे बड़ा कारण परिवेश की समनुरूपता रहा है |

साहित्यकारों की एक बड़ी समस्या यह भी है कि वे प्राय:बन्धनों में बँधकर सृजन करना पसन्द नहीं करते | यही कारण है कि वे सिनेमा में जाने से दूर भागते हैं | क्योंकि उन्हें पता है कि उन्हें फिल्म के निर्माता अथवा निर्देशक के दबाव में कहानी में बदलाव करने पड़ सकते हैं | दूसरी समस्या पटकथा लेखकों की है | वे अक्सर अतिनाटकीयता और अतिरंजना को ही फिल्मों की सफलता की एकमेव कसौटी मान लेते हैं | इसका सबसे बड़ा उदाहरण दूरदर्शन धारावाहिक 'चन्द्रकान्ता' का है, जिसमें अतिनाटकीयता और अतिरंजना को बढ़ाने के लिए बाबू देवकीनंदन खत्री के मूल उपन्यास की आत्मा ही नष्ट कर दी गई | एक अन्य बड़ी समस्या यह है कि अधिकांश साहित्यकार फिल्म निर्माण के विभिन्न तकनीकी पहलुओं से प्राय: अनभिज्ञ होते हैं और वे कैमरे की ज़रूरत के मुताबिक कथ्य दे पाने में असफल हो जाते हैं |

नवें दशक में आई भूपेन हजारिका की फिल्म 'रूदाली' ने समाज, साहित्य और सिनेमा की त्रयी को 'आर्ट सिनेमा' के सीमित सांचे से बाहर निकालने में अहम् भूमिका निभाई और इस धारणा को पुन: स्थापित किया कि साहित्य से जुड़ी हुई और समाज का वास्तविक अंकन करने वाली फिल्में भी हिट हो सकती हैं | बशर्ते उनमें निहित साहित्यिक संवेदनाओं का सिनेमाई रूपांतरण सफलतापूर्वक किया जाए | बाद में 'परिणीता' और 'थ्री ईडिएट' जैसी फिल्मों ने इसी धारणा को पुष्ट किया | 'मोहल्ला लाइव' कार्यक्रम में अनुराग कश्यप जैसे आज के दौर के फिल्मकार तो यह बात कहने में नहीं हिचके कि हिन्दी का अधिकांश लेखन फिल्मों की दृष्टि से अनुपयोगी है और समकालीन लेखक सिनेमा की ज़रूरतों के मुताबिक लेखन कार्य नहीं कर रहे हैं | कमोबेश यही राय निर्देशक सुधीर मिश्रा और फिल्म समीक्षक अजय ब्रह्मात्मज की भी है |

एक कारण और भी था कि इस दौरान साहित्यिक कृतियों पर बनने वाली फिल्में एक-एक कर असफल होने लगी थीं | प्रेमचंद की रचनाओं पर बनीं 'गोदान', 'सद्गति', 'दो बैलों की कथा', फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास पर बनी 'तीसरी कसम', मन्नू भंडारी की रचनाओं पर आधारित 'यही सच है', 'आपका बंटी' और 'महाभोज', शैवाल की कहानी पर आई फिल्म 'दामुल', धर्मवीर भारती के उपन्यास पर आधारित 'सूरज का सातवाँ घोड़ा', चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की कहानी पर आधारित 'उसने कहा था' आदि का असफल होना सिनेमा और साहित्य से दूरी की एक बड़ी वजह बन गया | इसके कारण समाज से भी फिल्मों की दूरी बढ़ने लगी| यद्यपि कमलेश्वर को फिल्म जगत में काफी सफलता मिली लेकिन एक साहित्यिक लेखक न होकर जब वे फॉर्मूलाबद्ध कथानक रचने लगे, तभी उनकी फिल्में सफलता का स्वाद चख सकीं और निर्देशकों ने उनकी कहानियों पर फिल्में बनाईं | 'द बर्निंग ट्रेन', 'राम-बलराम', 'सौतन' आदि उनकी फिल्में कहीं से भी साहित्य के चौखटे में फिट नहीं होतीं | यहाँ एक तथ्य यह भी महत्त्वपूर्ण और रेखांकित करने योग्य है कि हिन्दी फिल्म जगत में जितनी सफलता कवियों और शायरों को मिली, उतनी सफलता कथाकारों को नहीं मिल सकी | इसका एक कारण यह हो सकता है कि कथाकारों की कथा का कैनवॉस अत्यधिक विस्तृत होता है और इनमें 'शब्दों की महत्ता' सर्वोपरि होती है, जबकि सिनेमा में ऐसा नहीं होता. सिनेमा को अपने समूचे विस्तार को दो से तीन घण्टों के भीतर दृश्यों के माध्यम से समेटना होता है और यहाँ शब्द से अधिक महत्त्वपूर्ण 'अभिव्यक्ति' और 'प्रस्तुति' होती है | सिनेमा दृश्य-श्रव्य

माध्यम है और साहित्य पाठ्य माध्यम | यह अन्तर न समझ पाने वाले लेखक अथवा फिल्मकार इस रास्ते पर चलकर असफलता का स्वाद चखते हैं| फिल्मी नज़रिए से नाटक और एकांकी ही सिनेमा के सबसे नज़दीकी सम्बन्धी दिखाई देते हैं| वहीं कवियों और शायरों के लिए ऐसी कोई बन्दिश है ही नहीं | उन्हें तो किसी 'सिचुएशन' के मुताबिक गीत या गज़ल भर लिखनी होती है और सिनेमा के अन्य ज़रूरी आयामों से उन्हें कोई लेना-देना नहीं होता |

हिंदी साहित्य पर आधारित अनेक फिल्मों का निर्माण हुआ है | जब बोलती फिल्मों का दौर शुरु हुआ था तब स्वयं प्रेमचंदजीने फिल्मों की और अपना रुख बदल दिया था | प्रेमचंद की कहानी पर मोहन भावनानी ने सन् 1934 में मजदूर फिल्म बनाई | इस फिल्म में क्रांतिकारी तेवर होने के कारण अनेक जगहों पर प्रतिबंध लगाये गये | सिनेमा एक बहुत सशक्त विधा है जो स्वयं में संपूर्ण है | परंतु उसका सृजन साहित्य के समान स्वांत: सुखाय या व्यक्तिगत संतुष्टि के लिए नहीं किया जा सकता | साहित्य पढ़ते समय हम सिर्फ मनोरंजन की उम्मीद नहीं रखते हैं पर सिनेमा देखते समय हम मनोरंजन की एक बडी उम्मीद देखते हैं | सिनेमा में मनोरंजन को प्राथमिकता है | सिनेमा की पहली मांग है मनोरंजन | साहित्य में मानव जीवन की विभिन्न अनुभूतियों को अभिव्यक्ती दी जाती है| साहित्य तो विचारों का संवाहक होता है | समाज में मूल्यों की स्थापना या एकता स्थापित करने के लिए साहित्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है | उसी प्रकार सिनेमा में भी समाज में भिन्न परिवर्तन होते हम देख रहे है | सिनेमा के अपने उद्देष्यों को लेकर समाज के सामने आता है | सिनेमा के द्वारा मनोरंजन के साथ साथ ज्ञानप्राप्ती भी होती है | इस प्रकार समाज विकास में सिनेमा एवं साहित्य दोनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है | सिनेमा से और साहित्य से समाज, जनजीवन आदी घटकों की जानकारी आसानी से होती है | दोनों भी समाज से जुडे हैं | सिनेमा समाज तक गतिशिलता से पहूँचता है | आज लोगों के पास समय की कमी होने से साहित्य पढने की बजाए लोग कम से कम समय में सिनेमा देखना अधिक पसंद करते है |

निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि सिनेमा और साहित्य के बीच संवाद एक ऐसी प्रक्रिया है जो निरंतर चलती रहती है | लेकिन आज जो बदलाव हमारे सामने आये हैं उससे यही बताया जा सकता है कि दोनों माध्यमों को अपनी सृजनात्मक संभावनाओं को ध्यान रखकर एक दूसरे को साथ लेकर चलना है | इसलिए डॉ. जगदीप शर्मा कहते हैं साहित्य और सिनेमा दोनों ही समाजरुपी सिक्के के दो पहलु है | इनके बीना समाज की भावना एवं संवेदनाओं का कोई मूल्य निर्धारीत नहीं हो सकता | सिनेमा और साहित्य समाज में घटीत घटनाओं और जीवन का एक आईना होता है | इसमें सामाजिक गतिविधिओं और क्रियाकलापों के अक्स प्रतिबिंबित होते हैं | कोरी कथाओं और मिथ्या कथाओं वाले साहित्य और सिनेमा को कोई ख्याती प्राप्त नहीं हो पाती |

◆◆◆